

## अपनी बात

मेरे पास उप-यास को परखने के लिए न तो शाश्वत मानदण्ड हैं और न ही इसकी निश्चित परिभाषा है। हर कृति, यदि वह अनुकृति नहीं है, अपने अपने कला नियमों को लिये हुए होती है। इसी तरह हर उप-यास अपने अपने ससार तथा कला नियमों को लिये हुए है। इसकी राह से गुजरकर ही इसके स्वहृष को जाना तथा पहचाना जा सकता है। इसलिए मैंने आज के हिंदी उप-यास की राह से गुजरना आवश्यक समझा है—प्रेमचंद के 'गोदान' से लेकर निमल वर्मा के 'बे दिन' तक।

आज के हिंदी उप-यास का सूत्रपात मैंने 'गोदान' से किया है। यह उसी तरह जिस तरह मैंने आज की हिंदी-कहानी की शुरुआत 'पूत की रात' और 'कफन' से की है। यह उप-यास केवल होरी का गोदान नहीं है, प्रेमचंद की आधमवादी आस्था का भी गोदान है, आधुनिकता की चुनौती का परिणाम है। इसका दूसरा मोड़ अज्ञेय के 'मेखर' ने लिया है और तीसरा निमल वर्मा के 'बे दिन' ने। इसकी राह से गुजरने पर मुझे यह भी लगा है कि हिंदी-उप-यास को अभी तक अपना मुहावरा ही नहीं मिल सका है। कैसे नहीं मिला है—हमें समझने की कोशिश की है, और क्यों नहीं मिला है—इसका मेरे पास जवाब नहीं है। इतना कहा जा सकता है कि यह अपने मुहावरे की खोज में तलमन अवश्य है।

चण्डीगढ़

—इंद्रनाथ मदान

१ अक्तूबर १९६६



## अनुक्रम

### [इन उप-यासों के आधार पर]

१ गोदान	११ प्रेमचंद	१६३४ ३६
२ सुनीता	जनेन्द्र कुमार	१६३४
३ चित्रलेखा	भगवती चरण वर्मा	१६३४
४ त्यागपत्र	जनेन्द्र कुमार	१६३७
५ स-यासी	इशचन्द्र जोशी	१६४१
६ गैमर एक जीवनी १, २	अनेय	१६४१, १६४४
७ धाणमट्ट की आत्मकथा	हजारी प्रसाद द्विवेदी	१६४६
८ गिरती दीवारें	उपेन्द्रनाथ अश्व	१६४७
९ रतिनाथ की चाची	नागाजु न	१६४८
१० नन्ही के द्वीप	अनेय	१६४१
११ पय की खोज का भाग	दवराज	१६४१
१२ मूरज का सानवाँ पाड़ा	धर्मवीर भारती	१६४२
१३ बलचनमा	नागाजु न	१६४२
१४ गंगा मया	भरवप्रसाद गुप्त	१६४३
१५ मैला आँखल	रेणु	१६४४
१६ चाँदनी के खण्डहर	गिरिधर गोपात्र	१६४४
१७ बाले फूल का पौधा	लक्ष्मीनारायण लाल	१६४५
१८ जहाज का पछी	इलाचन्द्र जोशी	१६४५
१९ बूँद और समुद्र	अमृतलाल नागर	१६४६
२० सागर, सहरे और मनुष्य	उदयशंकर भट्ट	१६४६
२१ उमड़े हुए लोग	राजेंद्र यादव	१६४६
२२ उसका बचपन	कृष्ण बलदेव वद	१६४७
२३ पय तन पुनारुहे	राधेय राधव	१६४८

२४ झूठा सच १, २	यशपाल	१९५८, १९६०
२५ अँघेरे बन्द कमरे	माहन रावेग	१९६१
२६ यह पक्ष वधु था	नरेग मेहता	१९६२
२७ गहर भ घूमता आईगा	अशर	१९६३
२८ व दिन	मिमल बर्मा	१९६४



## आज का हिन्दी-उपन्यास

१ आज के हिन्दी-उपन्यास की बात तब बन सकती है जब इसे कल्प के उपन्यास से अलगया जा सके। आज के उपन्यास का किस कृति से मान जाए—यह एक जटिल समस्या है और जटिल इसलिए कि कविता एवं कहानि के वर्जन पर इस नये उपन्यास को सना देना उचित नहीं समझा गया है। इस साहित्यिक विषय में नवलता को न छाया गया और न ही पाया गया है। इसलिए आज का उपन्यास नाम अंतर सकता है। इस उपन्यास की रचनाओं में देश की स्वाधीनता के बाद स्वाजना या आकना उतना ही असंगत है जितना आज की या नया कहानी की 'परिद' से गुरु करता।<sup>१</sup> आज की कहानी में भूखपान जिन तरह 'पूत की रात' [१९३४] तथा कपन [१९३६] से हुआ है, उन्ही तरह आज के हिन्दी उपन्यास को 'गादान' [१९३६] से आरम्भ करा मुझे सगर्ज जान पड़ता है। मुझे यह लगता है कि १९३४-३६ के आस-पास कथाकारों की संवेदना में मौलिक अंतर आ चुका था और प्रेमचन्द ने अपनी संवेदना का छण्डन करना गुरु कर दिया था। 'पूत की रात', 'कपन' तथा 'गादान' तक आते-आते इनकी संवेदना बदल चुकी थी इनकी रचना प्रक्रिया में भारी अंतर आ गया था आधुनिकता की प्रक्रिया भ्रजन में अति श्रद्धा पक्क रहने लगी थी। इन कृतियों के अन्त में विराम बिह्व को जगह प्रदान किया हुआ है, इनमें समाधान का सन्ताप न होकर समस्या का असन्तोष आधुनिकता का चुनौती का सामनाकार है। प्रेमचन्द हल्कू के सेन का 'पूत रात' में नालगाय से चरा हुआ पात है बदमस्त घीसू और माधव को कपन' गराव के नाग मिरा हुआ पात हैं किसान के रूप में होरी को 'गादान' अन्त में घरागायी पाते हैं। इस तरह हल्कू घीसू माधव हारी आदि समस्याओं के समाधान पर श्रान बिह्व लग जाना है। यह उपन्यास नवल है या गानन नहीं है प्रेमचन्द की आस्था का भी गादान है बदना निवत आश्रमा में लगव की आस्था का गानन है। इनकी विद्वान् मुखारवानी

गांधीवादी समाधानों से उठ गया है। इस संवेदना में मोहम्मद की अनुभूति को आँका जा सकता है, पुरानी आस्था के टूटने के स्वराज को सुना जा सकता है, पुराने सत्य को राने की पीड़ा का अनुभव किया जा सकता है। प्रेमवाद की संवेदना नया मांड लेती है। इस उपन्यास के अन्तिम पन्ना में इस दिशा का संकेत मिल जाता है—घनिया यश की भानि उठी, आज जो सुतली वधो धी, उसके धीम आने के पसे लायी और पति के ठण्डे हाथ में रखकर सामन पड़ दातादीन से वाली—‘महाराज, घर में न गाय है न चटिया, न पसा है यही इनका गानन है।’ घनिया का पछाड़ खाकर गिर पड़ना उस सन्न तथा आश्रम का रह जाता है जिह्वा रखकर ‘संवास्तन, रगभूमि, प्रणिता’, प्रेमार्थम कम भूमि आदि में लडा किया था। इस तरह प्रेमवाद अपना परम्परा से हटकर गादान में हिंदी उपन्यास को नया मोड़ देते हैं। यह मांड इसलिए नितान्त नया नहीं लगता कि इसका साथ मेहता मालती की क्या भी जुड़ी हुई है जिसमें प्रेमवाद परम्परा के मल्ले की मिलावट है आदर्शमूलक जीवन दृष्टि का अवगेष है समष्टि मंगल अथवा सामूहिक कल्याण की भावना को निरूपित किया गया है आधुनिकता की प्रक्रिया में समझौते का प्रयास है। इनकी पारम्परिक मंत्री के सम्बन्ध में एक नये बंदम का उठाया तो गया है, परन्तु यह उठकर समाज सजा में गिर जाता है। इस सम्बन्ध में विवाह के स्थान पर मेहता तथा मालती में मित्रता की स्थापना नये मानवीय सम्बन्ध को भी इंगित करता है जिसकी कल्पना प्रेमवाद विनय साधिया [ रगभूमि ] में नहीं कर सके थे। इस तरह ‘गोदान’ में हिन्दी उपन्यास अपनी पुरानी परम्परा से अलग होन लगता है और इस अलग होन में आज के उपन्यास का संकेत मिल जाता है। इसलिए आज के उपन्यास की नींव [ १८३६ ] के पहले पढ़ चुकी थी और पढ़ने इसलिए कि गादान का लरान-नाल [ १९३४ से १९३६ ] तक माना गया है और इस काल में जनार्दन की चुनौती [ १९३४ ] और त्यागपत्र [ १९३० ] का रखन भी हा चुका था जिसमें आधुनिकता की चुनौती का नारी-कल्पना के रूप में स्थापना गया है। इन क्रिया में आधुनिकता का प्रक्रिया नारी-सम्बन्धी मामलों मान्यताओं के विरोध में गतिशील है। इन मामलों पर जनार्दन ने रक्षक का मोन आवरण का टाँ किया है परन्तु इसने भीतर जीवन पर यह स्पष्ट हो जाता है कि लरान आधुनिकता का चुनौती का अपन परिवर्ण में स्वीकार अवश्य करते हैं। जनार्दन की नारी और प्रेमवादी की नारा में जो अंतर पाया जाता है वह लरान चुनौती का परिणाम है। इस तरह आज का उपन्यास अपना परम्परा में

## आज का हिंदी उप-यास

हटने का आभास देने लगता है। इसका मूल कारण आधुनिकता की प्रक्रिया है जो 'आत्मोन्मुख यथाथ' या आत्म तथा यथाथ में सामंजस्य को भंग करने के लिए है और यथाथ व सम्मुख हान के लिए उप-यासकार को बाधित करती है। यथाथ क्या है? यह एक स्वतन्त्र प्रश्न है जिसका उत्तर तो बार-बार दिया गया है, लेकिन हर बार यह अधूरा रह गया है।

२ यदि आज का हिंदी उप-यास का सूत्रपात गान्धन से होता है तो इस दृष्टि से लेकर आज तक के उप-यास की राह से गुजरना आवश्यक है। इस तीस साल की अवधि में [१९३४-१९६४] सत्तार्ष उप-यासों के आधार पर इसका मूल्यांकन करना इस निबन्ध का उद्देश्य है। इन उप-यासों का चयन येरा है और इस तरह के हर चयन की अपनी सामा होती है जिसका दापी मुझे ठहराया जा सकता है। इसकी राह में गुजरने की धान पर बल देना इसलिए आवश्यक है कि हिन्दी उप-यास उन मजिहा से नहीं गुजरा है, उन अनुभूतियाँ से सम्पन्न नहीं है उन प्रयाग से नहीं निकला है जिनमें पाश्चात्य या विदेशी उप-यास। मुझे यह भी मन्दह है कि अभी हिन्दी उप-यास का अपना मुहावरा भी मिला है या नहीं। उसी उप-यास का जिस तरह अपना मुहावरा मिल चुका है उस तरह हिन्दी उप-यास को नहीं। इसमें अतिरिक्त भारतीय उप-यास का उद्भव तथा विकास भी विभिन्न परिवेशों में हुआ है। इसका विकास-यात्रा न बल अधिक लम्बा है बल्कि अधिक सम्पन्न भी है। यह उप-यास सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक जिनासा का गान्त करता हुआ दस गहराता हुआ चेतना धारा में बहता हुआ, बाहर भीतर में कभी सामंजस्य ता कभी विच्छेद स्थापित करता हुआ अपना पथ प्रगस्त करता रहा है। वस्तु की विभिन्नता तथा गिल्प की विविधता इस हिन्दी उप-यास से अलग कर देती है। हिन्दी उप-यास में तो सामाजिक जिनासा पूरी तरह गान्त हा मकी है और नहीं मनोवैज्ञानिक उत्तुरता। इसलिए हिन्दी का सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक उप-यास का परम्परा तनी सम्पन्न नहीं है। आज का हिन्दी उप-यास में जब चेतन धारा की बात की जाता है तो यह विसंगत लगती है। आरोपित भूया का आधार पर उसका मूल्यांकन एकांगी तथा अमंगत हा कहा जा सकता है। भारतीय उप-यास में उपाधम की चेतना धारा को गान्तना तथा जीवन हिन्दी आलाचना का पाश्चात्य आलाचना के गौच में गान्तना है या पाश्चात्य आलाचना का भारतीय मस्तरण निवासना है। इस तरह की तुलना का एक परिणाम इस बात में लक्षित होता है कि हिन्दी उप-यास निजी अस्तित्व तथा व्यक्तिगत साक्ष्य जिनो दृग्ग का

विभिन्न स्तर पर आत्मसाधन किया गया है। इसलिए हमका साक्षात्कार हर उप-यास में अपने-अपने स्तर पर हुआ है। आधुनिकता का मूल में प्रश्नचिह्न लगाने की जा प्रक्रिया है उसे हर उप-यास में जलग-अलग घरातल पर ही आँका जा सकता है। गानान में एक स्तर पर तोपर एक जीवनी में दूसरे स्तर पर वचनमा में तीसरे स्तर पर झूठा सच में चौथे स्तर पर और वे दिन में पाँचवें स्तर पर इस अभिव्यक्ति में मिला है। ऐसा तरह मुनीता उसका बचपन यह पथ बंधु था मला आँकन अन्ति में आधुनिकता का चुनौती का विभिन्न घरातल पर स्वीकारा गया है। इसीलिए हर उप-यास का मूल्यांकन इसी तरह से गुजरकर करना अधिक महत्त्व है। इसका कारण यह है कि उप-यास को परम्परा का पुरानी बगोछियाँ तथा पुराने मानक बल चुन हैं। आज यह अनुभव होना लगा है कि साहित्यिक विधाओं का विकास का विवचन कविता कहानी उप-यास-नाटक आदि का विकास का विवचन तो गायन समाज-गाम्भीर्य आधार पर किया जा सकता है लेकिन कृति विविधता का मूल्यांकन इस आधार पर सम्भव नहीं है। अब तक हमारे पास का पवित्र कृति विविधता का वास्तविक आधार पर आँकना रहा है और कृति का सही मूल्यांकन दूर होना रहा है। यह पण्डित चाहे समाज-गाम्भीर्य हा या मनाविज्ञान-गाम्भीर्य अस्तिस्त्ववात् हा या समाज यादी परम्परावादी हा या आधुनिकवादी बन्धुवादी हा या गिगवादी। अमर में उप-यास में आँकना तो यह होता है कि उप-यासकार क्या देखता है और किसे तरह देगता है क्या कहता है और किसे तरह कहता है। अगर बजाय बल हम बात पर लिया जाता है कि वह इस तरह क्या करना और कहता है, इस तरह क्या नहीं देगता और कहता। इस बात का भ्रम लिया जाता है कि उप-यास में ही उप-यास का समार का पाना होता है इसका महत्त्व को उप-यास करना होता है। आराधित मान्यताओं की दृष्टि में कृति विविधता का मूल्यांकन अनुपपन्न नहीं हो पाता। यदि वास्तविकता का मूल या मात्र की आधुनिकता का आधार पर ही उप-यास में आधुनिकता का एक मूल्य का रूप में आँका जाता है तो यह वास्तविक मूल्यांकन है। आधुनिकवाद की बगोछ पर सिमा कृति को परम्परा भी आराधित मूल्य के आधार पर इस आँकना लगा। आज आधुनिकता कृति को अतिरिक्त महत्त्व तो दे सकती है, लेकिन इसे कृति नहीं बना सकती। यदि आधुनिकवाद का कृति विविधता का परम्परा का धर्म बगोछे मान लिया जाए तो वास्तविकता का समाधान कालिदास का अनुपपन्न मूल्य का मानना परम्परापर का गायन का साहित्य का परिधि में बहिष्कार करना होगा। गुप्तम नवन गायन का अभाव बसा है। इसलिए मूल्यांकन का मान्यता नियम का अभाव में



हिंदी उपन्यासों में चयन का आत्मनिष्ठ होना और इनके प्रति प्रक्रिया का आत्मपरक होना स्वाभाविक है। इस तरह आलोचना एक महज, वास्तुमूलक, निरंतर प्रक्रिया का रूप धारण करेगी। उपन्यासकार वास्तव का मृजन करता है। इस वास्तव का स्वरूप क्या है यह भी एक स्वतंत्र प्रश्न है। आलोचक इस वास्तव का पुनः मृजन कर इस ज्ञान तथा पहचानने की कोशिश करता है। प्रेमचंद 'गोदान' में जिस वास्तव का सृजन करते हैं वह आलोचक की संवेदना में बलपूर्वक एक नया रूप भी धारण करता है। इसलिए किसी उपन्यास के उद्देश्य का निश्चित रूप से बनाना कठिन होता है, इस उद्देश्य की आरंभिक कदम उठाया जा सकता है। इसलिए आलोचना का निश्चित बनाना इसकी शोच में बाधित होना होगा। जब उपन्यास की राह में गुजरने की बात की जाती है तो इसका इतना ही आग्रह है। केवल वस्तु या गिल्प के आधार पर किसी उपन्यास का मूल्यांकन अधूरा रह जाता है। वस्तु का इसके गिल्प से अनुभूति का इसकी अभिव्यक्ति में अलग-अलग मकड़ी के जाल से उसका तारा को तोड़ने के समान है जो एक-दूसरे में घुन हुए होते हैं। हर कृति या उपन्यास अपने आप में, देश-काल में पूरा होता है। इसलिए इस जाल की रचना प्रक्रिया से अवगत होकर ही उपन्यास का पाना होता है। इस बात का स्पष्ट करने के लिए भगवत्परायण उपन्यास का नदी के द्वीप' मधुचंद्र मूल्यांकन एक उदाहरण है। वह अपने के इस उपन्यास का विवेचन इसकी वस्तु का इसके गिल्प से अलग-अलग करने हैं और इस सुंदर पक्ष पर मकड़ी की सजावट हैं। वह इसके सिद्धांत पक्ष का समाज विरोधी और गलत साबित करने हैं और इसके कला-पक्ष का सहज और सही। 'क्या इसमें विलास की घुघरी तथा मिथुन का अकेला-पन इसमें अभिन्न अंग नहीं है? क्या इसकी अनुभूति तथा अभिव्यक्ति में मधुर-मिलन नहीं है? वह इन बातों के तो कायल हैं कि लेखक क्या कहता है और किस तरह कहता है परन्तु इस बात का धार विरोध करते हैं कि वह इस तरह क्यों देखता है और उस तरह क्यों नहीं देखता? इसलिए अपने भगवत्परायण उपन्यास क्या नहीं है? आलोचक को यह निश्चित कि 'नदी के द्वीप' की कला महज है परन्तु मिथ्या समाज विरोधी इसकी वैयक्तिकता का व्यास व्यापक है और सामाजिकता का व्यास अनुचित आरोपित मूल्या पर आधारित है। इस तरह का मूल्यांकन साहित्यिक न होकर वादग्रस्त ही कहा जा सकता है। इस आधार पर उन कृतियों का मूल्यांकन में भी अपनाया गया है जिनका सामाजिकता का व्यास व्यापक है परन्तु जिनका गिल्प बाहर में बिखरा हुआ जान पड़ता

है। लेकिन आज पुरान मान्य बदल चुक हैं। उपवास बाहर से मिलता हुआ परन्तु भीतर से गुंथा हुआ बाहर से ष्टा हुआ परन्तु भीतर से जुड़ा हुआ हो सकता है। योपाल का लूठा सच हम तरह का उपवास है। इसमें दरारें भी पानी हुई हैं लेकिन दूतन बड़ भवन में य जाया से जाचक हो जाती हैं। आज भीतर से बिपरे एक दूट जोर बाहर से मुगलिन उपवास का मद्रिल्ट रचना की मना दन में मकाच हाता है। उपवास में एक में अधिक अवितिया हाती हैं जो एक-दूसरी का बाली या छूता चला जाता हैं ताकि जीवन का मध्विन चित्र उतर सक। गालन में गहरा तथा दहानी जानन व बिच बाहर से दो स्वतंत्र अवितिया का आभास अवदन लन है परन्तु भीतर से वे जुड़ हुए हैं। इस उपवास में देहाना जग का स्वतंत्र रूप में छापन का सलाह दन का दापी मुग टहराया जा सकता है। यह मेरी भूल का परिणाम है। आज उपवास का किसी निश्चित परिभाषा में बाँपना भी कठिन हो गया है। यह क्या साहित्य की एक साहित्यिक विधा है जिस सिमा निश्चित चौकटे में बाँपना इसलिए मुश्किल है कि यह प्रयोगशील होना चला है। आज न जीवन की जटिलता का अभिव्यक्ति दन व लिंग गका प्रयोगशील होना भी स्वाभाविक है। और पाश्चात्य उपवास की प्रयोगशीलता का आधार पर निम्न उपवास का जीवन भी अलग है। यदि निम्न में ज्ञायन का प्रयोगशीलता नहीं है तो इसमें प्रयोग शीलता का निमित्त अभाव भी नहीं है यदि गम पाश्चात्य उपवास की आपुनिकता नहीं है तो हम आपुनिकता का निमित्त अभाव भी नहीं है। यदि निम्न उपवास का रसा उपवास का तरह अपना मुलायम नहीं मिला है तो इसका कारण हो सकता है। एक समाजशास्त्रिय यह कह सकता है कि समाज जय स्वर अराजकता में बिगड़न लगता है तब हमारा मद्रिल्टन उपवास में सम्भव न हो जाता। आज व परिवर्तन में बिगड़न का स्थिति है। हमारा जामान गायन हिंदा रहाना की विद्युत चमत्ता में लिया जा रहा है कहाना का अक्ली अवितिया तथा डिग्निया में हमारा अभिव्यक्ति हो रहा है। उपवास का स्वभाव में सम्भूत होता है और हम सम्भूत या पक्कन का गति हिंदा उपवास में अभी नहीं है। हमारा गायन हिंदा में लप उपवास का विराम होना लगा है, परन्तु यह धारणा भी ठाम न हो जान पत्ता। जगर लपु उपवास के नि की रचना आज हो रहा है मा कृद् उपवास गठन मच की भी। इतना अवदन कहा जा सकता है कि उपवास का विराम गम वग में नहीं हो रहा है जिस वग में गमका का। यह युग चलाया या ल है या लिंगिनि वि प का उज आविर बाग्या का परिणाम है या गालिनि मरणा का परिणाम — हमारा



है। यदि आज के हिंदी उपन्यास को उपन्यास की सजा न देकर उपन्यास की सम्भावना कहा जाए तो अधिक समत होगा।

२ आज के हिंदी उपन्यास में जहाँ जीवन की जटिलता तथा सकुलता का अभिव्यक्ति देने का प्रयास है वहाँ माहमग की अनुभूति का विरासन में पारर इससे जूझने तथा इसे झलने के भी प्रयत्न हैं और इसमें उबरने का संकेत भी है। इस विरासत का विस्तार भी हुआ है और सकार भी, इसका पोषण भी हुआ और ग्रापण भी। इससे मूल में आधुनिकता की प्रक्रिया है जो जीवन की मायनाओं पर प्रश्न चिह्न लगाकर इस जीवन की प्रेरणा देती है। इसकी चुनौती को कभी संवेदना का स्तर पर स्वीकार गया है [ 'बंजि', यह पथ बंधु था' ] ता कभी वैचारिक घरातल पर [ 'बूठा सच', 'सयासी ] कभी इस चुनौती से छायावादी भूमि पर समकय स्थापित किया है [ 'बाणभट्ट की आत्मनया' ] ता कभी समझौता [ सागर लहरें और मनुष्य ] कभी इस व्यष्टि-मय का स्तर पर आत्मसात किया गया है [ 'काफ़े फूट का पीछा' ] ता कभी समष्टि-मय का स्तर पर [ 'कब तक पुकारूँ' ]। इस तरह आधुनिकता प्रायः गणितीय और कभी कभी स्थितिगोल हान का आभास देती है। हर उपन्यास में आधुनिकता का साक्षात्कार अपने-अपने स्तर पर हुआ है। आज का उपन्यास की विकास मात्रा प्रायः दो गिनाओं में उपलब्ध है—एक गिना में उन कृतियों का लिया जा सकता है जिनमें जीवन तथा जगत् का चित्रण तथा मूल्यांकन प्रायः समष्टि-मय समष्टि-मयाय समष्टि-मयल के घरातल पर हुआ है और दूसरी गिना में वे कृतियाँ आती हैं जिनमें जीवन तथा जगत् को जीवन तथा परम्परा की कसौटी प्रायः व्यष्टि-मय व्यष्टि-मयाय तथा व्यष्टि-मय की है। इसका यह आशय नहीं है एक का दूसरे में नितान्त अभाव है। प्रश्न संकलन दत्त का है। नागार्जुन ने आधुनिकता की चुनौती को समष्टि-मय का घरातल पर स्वीकारा है और अक्षय ने व्यष्टि-मय का स्तर पर। अन्य उपन्यासकारों की कृतियों में भी इन दो परम्पर विराधी गिनाओं का आभास मिलता है। इन सबका कृतियाँ या सन्धि-रचनाओं की सजा देना भी कठिन है। इनमें दरारें तो हैं लेकिन कम। इनका आधार पर आज का हिंदी उपन्यास की उपलब्धियाँ तथा सीमाओं का आँका गया है। इसकी उपलब्धि क्या है और कौसी सीमा चिह्नित—किसी अनुमान इन उपन्यासों की राह में मुड़कर ही लगाया जा सकता है। इसका क्या आत्मनिष्ठ है और किस तरह का हर चयन का समझौता है त्रिगुण काया भुज ठहरेगा या करना है परन्तु यह आत्मनिष्ठ चयन का आधार भी है। इन उपन्यासों में यथार्थम्भव तथा यथार्थता गाम्भीर्य

मायताओं का विराध है और आधुनिकता की चुनौती का स्वीकारने का प्रयास भी ।  
उपन्यास में इस चुनौती से जूझने का प्रयत्न लगभग १९३४ से होन लगा था—

१—गाल्पन [१९३६] 'रचना-काल १९३४ १९३६ २—'सुनीता'  
[१९३४] ३—'चित्रलेखा' [१९३४] ४—'त्याग पत्र' [१९३७] ५—'सन्ध्यासी'  
[१९४१] ६—'शेखर एक जीवनी भाग १ [१९४१] भाग २ [१९४४] ७—  
'बाणभट्ट की आत्मकथा' [१९४६] ८—'गिरती दीवारें [१९४७] ९—  
'रतिनाथ का चाची' [१९४९] १०—'नदी के द्वीप' [१९५१] ११—'पथ की  
खोज' भाग [१९५१] १२—'मूरज का मानवा घाटा' [१९५२] १३—  
'बलचनमा [१९५२] १४—'गया मया' [१९५३] १५—'मैला आबल'  
[१९५४] १६—'चाँदनी के खण्डहर [१९५५] १७—'बूढ़ और समुद्र' [१९५६]  
१८—'सागर, लहरें और मनुष्य' [१९५६] १९—'उल्टे हुए राग [१९५६]  
२०—'जहाज का पछा' [१९५७] २१—'उसका बचपन' [१९५७] २२—  
'कब तक पुकारें' [१९५८] २३—'झूठा मछ—या भाग [१९५८ १९६०]  
२४—'अँधरे का कमरे' [१९६१] २५—'यह पथ बंधु था' [१९६२] २६—  
'गहर में घूमना आईना' [१९६३] २७—'बि दिन' [१९६४] ।

इस सूची में यह अनुमान लगाया जा सकता है कि तीस सालों में  
[१९३४ से १९६४ तक] सत्ताईस उपन्यासों की रचना एक साल में लगभग  
एक ही उपन्यास का ईश का चाँद बना देती है । इस साहित्यिक विधा का  
उतना विकास नहीं हुआ पाया है जितना कहानी या कविता का और इस धारणा  
का आधार बवल सत्कारत्मक न होकर गुणात्मक भी है । आधुनिकता की चुनौती  
का जो आज की कृति को अतिरिक्त महत्व हो दे सकती है उसे कृति नहीं  
बना सकती कविता-कहानी न अधिक गहरे तौर पर स्वीकार किया है । आज  
के उपन्यास का प्रेमचन्द के 'गाल्पन' से इसलिए आरम्भ किया जा सकता है कि  
इसमें उपन्यासकार अपनी ही सदनवादी या सुधारवादी परम्परा का लक्ष्य  
करते हैं । इसमें पहले 'सुनीता' [१९३४] और 'चित्रलेखा' [१९३४] का  
प्रकाशन हुआ था परन्तु 'गाल्पन' का रचना-काल भी १९३४ में आरम्भ  
होना है । इसलिए आज के उपन्यास का मूल्यवान् मादान से लेकर के  
'निरा' तक का साहित्यिक कृतियाँ के आधार पर किया गया है । हिन्दी उपन्यास  
की विकास-यात्रा गौरवदत्त के दरवानी जेठानी की कहानी [१८७०] से  
गुरु दानी है या श्रद्धाराम फिल्लौरी के 'मायगता [१८७७] से या श्रोत्रिवास  
दाम के 'परागा मुर' [१८८२] से—जिसका जाननागे गांधी की परिधि में  
१ हिन्दी का सभ्य पहला उपन्यास 'धर्मशुभ', १४ फरवरी, १९६५ ।

आती है और यह विज्ञान का ही अधिक गाना दसती है। आज के उपन्यास से परिचित हान के लिए हमका विषय महत्व नहीं है। इसका स्वरूप का पञ्चानन के लिए कुछ नामवर और कुछ अनाम उपन्यास का रना पडा है। हम आमार की दृष्टि में बढ भी हैं [ गादान गिरता दोवारें 'पय की गाय 'बूँद और ममुद, जहाज का पछी 'बब तर पुकार' मूठा मच ] और कुछ छात्रों की [ मुनोता त्यागपत्र रतिनाथ की चाचा मूरज का सानवां घोडा काठफूल का पोषा उत्तरा बचपन के दिन ] जिन्हें लघु उपन्यास की मना वा जानी है। उपन्यास और भी हैं जो छूट गए हैं। यदि हिंदी के उपन्यास का सत्या हम हाना तो इन पर गाय प्रबन्धों की मत्या रतनी अधिक नहानी। इसका मूल्या बन भी अनक दृष्टिया से हा चुका है—प्रवृत्तिया के आमार पर सामाजिक समाजवादी व्यक्तिवादी मनाविन्यपणवादी उपन्यास का विवचन हुआ है यथाय के आधार पर सामाजिक यथाय व्यक्तिगत यथाय मनाबनानिक यथाय एतिहासिक यथाय आचलिक यथाय के अन्नगत उपन्यास का विन्यपण हुआ है। इसका मूल्याकन कभी गिर की दृष्टि से ता कभी बन्नु की दृष्टि से कभी चरित्र चित्रण के स्वर ता कभी कथानक के स्वर कभी पात्रवाच्य उपन्यास के सद्भ म ता कभी वगला उपन्यास के सद्भ म हुआ है। इस तरह आज के उपन्यास की इतनी चोर-पाह हुई है कि इसकी मूरत ही शिगड गई है इसके वास्तविक स्वरूप का पहचानना कठिन हा गया है।

४ इन सत्ताइस उपन्यासों की राह से गुजरने में यह स्पष्ट हा जाना है कि आज के उपन्यास का विकास दो दिशाओं में हाता आया है आधुनिकता की चुनौती को दो विभिन्न धरातलों पर स्वीकारा तथा आत्ममान किया गया है। 'गादान बलचनमा गगा मया मला आचल' बूँद और ममुद' बब तर पुकार' मूठा मच आदि उपन्यास आधुनिकता की चुनौती का प्राय सामाजिक स्तर पर स्वीकारत हैं और समष्टि-सत्य की दृष्टि से पुरानी मान्यताओं पर प्रश्न चिह्न लगात हैं। इनमें आधुनिक सचेदना की भी भिन्नता है, आधुनिक सचेतना में मौलिक एवं मूल्यम अन्तर भा पाया जाना है। इसका निरूपण कृति विशेष के विवचन में किया जाएगा। इसी तरह दूसरा दिशा के उपन्यास है जिनमें आधुनिकता का सामान्य व्यक्तिगत स्तर पर उपन्यास है और जिनमें पुराने मूल्यों पर प्रश्न चिह्न व्यक्तिगत स्तर की दृष्टि से लगाया गया है। पहा मामाजिक परम्परा के उपन्यासों का मूल्याकन इसलिए अपेक्षित है कि हिन्दी-उपन्यास में इसका अभिव्यक्ति विरासत में मिली है। आज के उपन्यास में दोनों दिशाओं के उपन्यास का समानांतर विकास होता रहा है। गोदान तथा मुनोता की

रचना एक ही काल में हुई थी। प्रमचन्द न खत्री-गहभरी की परम्परा का दायें म पाया था। इस उपन्यास परम्परा में विचित्र सयागा, असंगत परिस्थितियाँ, नीरस भाषणा तथा विवरणों का उद्देश्य एक माननावद्ध लक्ष्य की उपलब्धि है। यह लक्ष्य चाहे चन्द्रकान्ता हा या सामाजिक सुधार, वेश्या का उद्धार हो या किसानों की गरीबी का परिहार। वह गोदान में आकर अपनी आश्रमवादी आस्था को साँव ठेके हैं लेकिन मानव के मानवी विकास में इनका विद्वान् अभी कायम है। इनकी संवेदना में अन्तर अवश्य पड़ा है, रचना प्रक्रिया में सजगता का पुट भी गहरा अवश्य हुआ है परन्तु आधुनिकता की चुनौती को खुलकर स्वाकारण में वह सफल नहीं हो पाए हैं। इस बात की चल्क मालती की समाज-सेवा में मिल जाती है। वह आधुनिकता की चुनौती का महाजनी सम्यता के विराट में स्वीकार करते हैं जिसकी काली छाया गहर तथा गाँव के जीवन पर भँडरान लगती है। यह इनकी गांधीवादी आस्था का गिरा देनी है। इस सम्यता के व्यापक प्रभाव का चित्रित करने के लिए प्रमचन्द न गोदान में दो समा-नान्तर कथाओं का बाँधने का प्रयास किया है। यदि खन्ना तथा तन्वा गहर के महाजन हैं तो दानाजीन, श्रीगुर, दुलारी, नान्तराम, पटवरा तथा मगरू गाँव के महाजन हैं। हारी तथा उसका बेटा गाँव तक महाजनी का पेशा करने से मनाफ नहीं करते। इस विद्वन्मनात्मक स्थिति में लेखक के व्यापक दृष्टिकोण का परिचय मिल जाता है। इस तरह महाजनी सम्यता जिसका विस्फरण उपन्यासकार न इस नाम के अपन निबन्ध में भी किया है गहरी तथा दहाती जीवन का गायण करने लगती है। अब गाँव में पञ्च-परमेश्वर का स्थान महा-जन-परमेश्वर ने ले लिया है और उसने दहाता समाज की रीढ़ का ताड़ दिया है। प्रमचन्द के आँखें मूक चुक हैं और इनके मुख पर इनकी दृष्टि साफ हान लगती है। इसका परिचय हारी के जीवन में मिल जाता है। वह आत्म-सम्मान का मुरीत रखने के लिए मध्यमगील है, परन्तु इस मध्यम में वह छल भी कर सकता है झूठ भी बोल सकता है अपनी लड़की का भावच सनता है। वह सन का गाला भी कर सकता है, ईर्ष्या में विनोद भी कर सकता है। हारी की मर जाय मामन्ती बहना का नाम है जिसमें मधुसूत परिवार, पचायत धर्म, खेती आदि का गिना सकता है। एक अजगर की तरह खेता हारा का निगल जाती है। इसमें अनिश्चित विरादरी का गामन दण्ड का भुगनान, गाय का अन्त, अन्न ही भेन में हारी का चाकरा व्यक्तिगत घटनाएँ नहीं हैं सामूहिक तथा सामाजिक घटनाएँ हैं। इस तरह गामन्ता तथा पूँजीवादी ममृति किसान को परास्त कर रखा है। हारी का गाशन बस एक किसान का गाशन नहीं है,

पूरे विगानी समाज का गानन है, प्रेमचन्द को गांधीवादो आस्था का गानन है। होरी व माधने भविष्य अहंकार की तरह है। उमरी चेतना निधिल हा चुरी है, उमर पतन की गीमा मोमाहीन है। इस स्थिति से उबरन के लिए प्रेमचन्द जिसी राह का सुझाव नहा दे। दृष्टि अनुभव कर लिया है कि मत्पापह से अयाय का दमन नहीं हुआ है। मनाहर और बाहर पहल हा मर चुक हैं इनकी ममाधि पर हारी भी अपना दम ताड चुका है। बलराज और गाबर का विशेह नपुसक सिद्ध हुआ है। मायव और धीमू [ वनन ] औरत की ताजा लाग छाडकर ताटी पीने चले गए हैं। हनू [ पुन की रात ] भी अपना गेन छाडकर अचकार में बैठने लगा है। अथ दबता बनना तो क्या इन्सान बनना भी बठिन हा गया है। इसका कारण सामन्ती तथा महाजनी सम्पत्ता के बंधन हैं जो मानवीयता का हत्या करन में सफल हुए हैं। इस तरह प्रेमचंद आधुनिकता का साक्षात् करने में सफल होते हैं। वह समागदन में चलकर 'गादान' में आत आत आधुनिकता की चुनौती को स्वीकारन की गांधी दत्त हैं। इनकी मकान्ता में जो विकास हुआ है इनकी रचना प्रक्रिया में जो परिवार आया है वह इस चुनौती का परिणाम है। वह सामाजिक पथाप के घरातल पर आधुनिकता का आत्मगान करन का आभास दत्त हैं। इसकी स्पष्ट अभिव्यक्ति गादान में उपलब्ध है। इसलिय आज के हिन्दी उप्यास का सूत्रपात इस दृष्टि से माना जा सकता है। इसका बीज तो इनके अथ उप्यासों में बिगरे हुए हैं इसका अकुर भी इनमें फूटे हैं परन्तु इसकी चरम परिणति गानन में ही हुई है। चनू अहीर [ 'सयामन' ] का जीवन दान मनाहर और बलराज का समय [ प्रेमभ्रम ] मूरदास [ रणभूमि ] का बलिदान अवधारण हा गया है। यह सत्याग्रह की गविन्या का पराजय है। प्रेमचन्द महात्मा गांधी से पहले गांधीवादी थे परन्तु इनका गांधीवादा आधुनिकता से टकराकर चूर चूर हा जाता है इनकी आस्था ङगमगान लगती है इनकी दृष्टि साफ हान लगती है और वह गांधीवाद से समाजवाद की ओर उन्मुख हान लगत हैं। यह आधुनिकता की चुनौती का परिणाम है जिसने मूल में वगानिव दृष्टि है जो इस बाल में सामन्ती तथा पूँजीवादी ससृति की भायनाआ पर प्रदनचिह्न लगाने के लिए बाधित करती है। इस तरह वह ममसामयिना के माध्यम से आधुनिकता का अभिव्यक्ति देने हैं और सामाजिक पथाप के घरातल पर इस स्वीकारते हैं।

५. जनद्रकुमार ने आधुनिकता की चुनौती को व्यक्तिगत स्तर पर स्वीकारा तथा नगारे है घर तथा बाहर व्यक्ति तथा समाज की समस्या को पति-पत्नी प्रेमी के पारस्परिक सम्बंध के आधार पर उठाया है और इसके



निरूपण में आधुनिकता का परिचय भी दिया है। प्रेमचंद के उपन्यासों में जहां प्रेम की समस्या को विवाह के पहले उठाया गया है वित्त-सोपिया [‘रगभूमि’], महता मालती [‘गादा’] के प्रेम की परिणति विफलता तथा मन्त्री में होती है जनद्रुमार की कृतियों में वहां इस समस्या को विवाह के बाद उठाया गया है। इनके लगभग सभी उपन्यासों में पति पत्नी प्रेमी का योजनाबद्ध तिकोण इनकी रचना प्रक्रिया की यात्रिकता को सूचित करता है। प्रेमचंद की आधुनिकता मालती मेहता मन्त्री को मोमा से जागे जाने की अनुमति नहीं देती, वह प्रेम की परिणति को विवाह में देखना चाहते हैं। नारी की नियति को पत्नी या मा के रूप में अंकित है, जबकि जनद्रु की आत्मा विवाह में न होकर प्रेम में है। प्रेम एक व्यक्तिगत भावना है और विवाह एक सामाजिक धारणा प्रेम बाहर का प्रतीक है और विवाह घर का। जनद्रु नारी को मात्र नारी समझते हैं, उसका पत्नी होना इतना महत्व नहीं रखता जितना उसका प्रयत्नी होना। इस सपन में नारी टूट जाती है, वह न घर की रहनी है और न ही बाहर की। इस समस्या का उठाकर वह इस समस्या का रूप में ही छाड़ देता है। इसका समाधान नहीं दे पाते। इस तरह प्रश्न का महत्व का प्रश्न में ही आका जा सकता है। जनद्रु जब इस समस्या पर अपना दार्शनिक तथा आध्यात्मिक रंग चढ़ाने का प्रयास करते हैं तब वह आधुनिकता की सुनौती को नकारन की साक्षी देते हैं। इसलिए आधुनिकता की प्रक्रिया जनद्रु के उपन्यासों में गतिशील तथा स्थितिशील होने का परिचय देती है। जहाँ यह गतिशील है वहाँ इसकी अभिव्यक्ति सवेदना के स्तर पर है और जहाँ यह स्थितिशील है वहाँ इसका निरूपण चिन्तन के घरायश पर है। जनद्रु की सवेदना तथा चिन्तन में तनाव एवं विचार की स्थिति है जो इनकी रचना प्रक्रिया को संचालित करती है। सुनीता रात के मधुर गुनगुन जंगल में हरिप्रसन्न के सामने निरावरण होकर भी स्वयं का श्रीरामत्व की पत्नी मानती है। पति के लिए तन और प्रेमी के लिए मन देने की समस्या नारी का तनाव की स्थिति में डाल देती है। और बार बार जब इसका निरूपण होने लगता है तो यह लेखक की व्यक्तिगत समस्या का रूप धारण करने लगती है या उसके अनुभूत का आभास देने लगती है। वह नारी का सतीत्व को इसका अन्तिम रूप में अम्बोका करने हैं और उसका नारीत्व को निरूपित करना चाहते हैं। इस निरूपित करने में वह अपने चिन्तन की समुल्लाह का ही परिचय दे पाते हैं। चोर और चोरी के आधार पर प्रेमचन्द तथा जनद्रु का जीवन दृष्टि में अन्तर का इस तरह स्पष्ट किया जा सकता है। निमी ने चोरी की है। प्रेमचंद के अनुसार—‘चार बुरा नहीं है, चार

सुरी है, धोर गांधु का सफ़ा है और प्रायः बन भी जाता है।' जनार्दन के अनुसार—'चार बीन है ? चारी क्या हाती है ? चार चारा में पारस्परिक सम्बन्ध क्या है ? इस सम्बन्ध में हिमा अहिमा का भिन्नता क्या है ? और अन्तिम रूप में सब तन्तुबाल है जिसमें मसड़ी पंखार निबल नहीं मक्ता यह उमरी निपति है। उस तरह का भिन्नता जनार्दन के उपन्यासों की रचना प्रक्रिया में उस तरह दसरे डाल देना है जिस तरह यह इनकी कहानी की रचना प्रक्रिया का ब्यापक निष्पत्ति या निबन्धात्मक कहानी का रूप देना है। इसका परिणाम यह निष्पत्ति है कि 'मुनीता' त्यागपत्र आदि की मूल समस्या उत्पन्न कर अलग हो जाता है। मुनीता में भूल गमक्या हिमा और अहिमा के जय-पराजय की है या धर और चान्द में पारस्परिक संधि की है या सनातन या नारायण में पारस्परिक विरोध की है या नारी के बचपन तथा उमरी मुक्ति की है या व्यक्ति तथा समाज का है या स्वच्छन्द प्रेम तथा विवाह की है—यह लेखन के उत्पन्न हुए चिन्तन का परिणाम है। बाल्य में जनार्दन आपुनिकता के सम्मुख होकर इसमें विमुख हो जाते हैं द्वन्द्व में पड़कर उत्पन्न जाते हैं। इस लिए वह नारी के तन माँ की बात करने लगा है। इनका विभाजित व्यक्तित्व इस द्वन्द्व का परिणाम है। मुनीता के लिए धर भी महत्व रखा है और बाहर भी पति भी महत्व रखता है और प्रेमी भी। श्रीमान् भी सब सरल-सीधा पति प्रेम है और हरिप्रमन्न को लेकर खूब छन्द एकांगी प्रेम है। वह दोनों की आर लपकती है। दाना में खयन नहीं कर पाती और दुविधा में दूढ़ जाती है। वह अपना समस्त लुटार भी हरिप्रमन्न के साथ नहीं जा पाती या फिर हरि प्रमन्न वस्तुस्थिति से पलायन कर जाता है। मुनीता के माँ में अनुनाय की भावना भी नहीं है। जनार्दन आपुनिकता की चुनौती का सीमित रूप में इस लिए स्वीकारते हैं कि वह न्याय पर अन्त में रहस्य का आवरण डाल देते हैं। वह विवाह के बचपन का ताड़कर स्त्री मायनाआ का तिरस्कार कर नारी के अधिकार को स्थापित कर धन जंगल में इसका परिस्थान कर वस्तुस्थिति में भागन की वागिनी करते हैं। उस तरह की दुविधा नपसकता का परिणाम भी हो सकती है। इनका स्वच्छन्द प्रेम छायावादी बाध की देन होने का आभास देना है। इस दमित मायनाआ का विरोध भी कहा जा सकता है जिसकी चमक अभिव्यक्ति त्यागपत्र की करण क्या में उपलब्ध है। दयाल का जजी के पद से त्यागपत्र देना और हरिद्वार में विरक्त जीवन बिताना अनृप जीवन की परिणति है। मृणाल जठररुह साल तक मायनाआ का महनकर एक दिन जीवन की समस्त वेदना एवं मत्ताप का लिये मसार में चमक देती है। दयाल के

जीवन पर द्रम समाचार का इतना गहरा आघात लगता है कि वह विरक्त जीवन बिताने लगता है। जैनेन्द्र द्रम सीला पर सोचते ही रह जाते हैं, कुछ पार नहीं पाते, कुछ भेद नहीं पाते।<sup>१</sup> द्रम दृष्टि में आत्मपादन का सिद्धान्त है या पद-पीडन का याघी-नीति है या हिटलर-नीति, आत्म व्यथा का निरूपण है या अमुक्त भावना का चित्रण अहिंसावाद का पोषण है या विषम विवाह का विरोध—यह इतना महत्व नहीं रखता जितना यह महसूस करना कि कहीं कुछ गड़बड़ है। कहीं क्या? सब गड़बड़-ही-गड़बड़ है। मृष्टि गलत है। समाज गलत है। इससे ऊँकर कुछ होना होगा, उतर कुछ करना होगा।<sup>२</sup> इस प्रतिक्रिया में आधुनिकता की झलक है, पर 'क्या करना होगा' में इसका निषेध भी है। इसका उत्तर यात्री नीति अहिंसा तथा सपस्या के निरूपण में किया गया है। मृणाल का कायलवाचे के साथ भाग जाना और समाज का नाट्यने पीडन से इन्कार करना, इससे अलग होकर उसका स्वयं टूट जाना आधुनिकता में पलायन है। उपन्यास में स्थिति की अस्वीकृति तथा इसमें पलायन उम मुग चेतना का परिणाम है जिसमें आधुनिकता की प्रक्रिया दुविधा से ग्रस्त होकर सभी गतिशीलता सभी स्थितिशील रूप में व्यक्त है। इसका चित्रण तथा निरूपण नारी पात्रों के माध्यम से किया गया है जो उपन्यास के केन्द्र में है। इनके लगभग सभी उपन्यासों में मूल समस्या प्रेम और विवाह की है व्यक्ति और समाज में पारस्परिक विरोध की है। इस समस्या को उठाने में जैनेन्द्र आधुनिकता का परिचय देने हैं परन्तु इसमें निरूपण में वह इसका निषेध करने में ही मगल हुए हैं। वह व्यक्ति को मूलतः व्यक्ति के रूप में भावना देने हैं। इनके उपन्यासों की रचना प्रक्रिया में यह स्पष्ट हो जाता है कि इनकी नारी दो पुरुषों के बीच डालती रहती है वह आधुनिकता तथा मध्य कालीनता की दुविधा से ग्रस्त है। रचना विधान की दृष्टि से इनके लगभग सभी उपन्यासों में ['परम', 'मुनीता', 'कन्याणी', 'त्यागपत्र', 'सुखदा', 'विवेक', 'व्यथात'] त्रिकोण की स्थिति यात्राबद्ध है। इस आधार पर जैनेन्द्र उस दृष्टिणी के समान हैं जिनमें पास पकवान ती योडे हैं लेकिन वह परमने में कुशागता का परिचय अवश्य देती है। जगदीश पाण्डेय इनको खोर हरण का क्यावार इस लिए कहते हैं कि द्रम योजनाबद्ध त्रिकोण की स्थापना में प्रायः नारी ही अपना खोर हटा देती है और बाढ़ में विनाश का उपरान्त देने लगती है।<sup>३</sup> इस

१ 'त्यागपत्र', १० ७२।

२ 'वहो', १० १०।

३ 'जगदीश पाण्डेय', 'कहानीकार जैनेन्द्र', १० ४२।

का मण्डा तथा सामाजिकता का सण्डन है व्यक्ति-मत्त्व के स्तर पर आधुनिकता की स्वीकृति है। इस व्यक्ति-मत्त्व का दूसरा पक्ष नियतिवाद से सम्बद्ध है। जब व्यक्ति का परिस्थितियाँ का दाग बहा गया है तब उन सामाजिक बंधन तथा प्राकृतिक नियमों का शकत किया गया है जिनसे अधीन होकर उसे जीवन जीना पड़ता है। उसकी विवेचना का सामाजिक विधान में लीजने की वजाय उसकी नियति में आँका गया है। इस उपवास के चरित्र में चित्रलेखा है जिसका मूल व्यक्ति-मत्त्व था तथा भागी के जीवन का संचालन करना है। इनके परस्पर-विरागी परित्रा का नाट्यात्मक दली में उद्घाटित किया गया है जो इस उप-वास की निष्पत्ति विवेचता है। इस तरह चित्रलेखा, जो अमापारण व्यक्ति-मत्त्व से सम्पन्न है, जिसका 'वाह्यान्तर' अमूर्त मुपमा से सुवासित है, जिसके लिए जीवन एक पक्ष है जो बीजगुप्त तथा कुमारगिरि दाना पर हावी है जो अपने रूप तथा व्यक्ति के बल पर पार्श्वपुत्र के युवा हृदय को स्पन्दित करती है जिसके लिए जीवन एक स्थिति न होकर एक गति है जो वागी के अहभाव का तोड़ने के लिए स्वयं टूट जाती है। वह अनुराग तथा विराग में डालकर भागी तथा वागी में अनुरक्त तथा विरक्त होकर आत्मिक प्रेम का पान के लिए अपना जीवन का पिलीन कर देती है। कृष्णादित्य के प्रेम में बल आत्म विस्मरण या बीजगुप्त के प्रेम में मादनता थी, कुमारगिरि के प्रेम में अहभाव की तुष्टि थी असंभव का सम्भव बनाने की लालसा थी विजय पान की कामना थी। चित्रलेखा आत्मा के पावन सम्बन्ध में प्रेम का पान चाहती है। यह दृष्टि पाण छायावादी बाध की दन है। इस बाध में एक आर आधुनिकता की स्वीकृति है तो दूसरी आर इसमें पलायन भी है। यह स्थिति छायावादी बाध की भी है जिसके मूल में एक आर मध्यकालीन बाध का विराग है ता दूसरी ओर आधुनिकता से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास भी है। यह सम्बन्ध आत्म-वाणी धरातल पर ही सम्भव हो सका है। बीजगुप्त का कथन है— व्यक्ति-मत्त्व जीवन में प्रधान है और व्यक्ति में ही समुदाय बनता है। जो व्यक्ति व्रजित है उस व्यक्ति का समुदाय का भाग बनाना अपना ही अपमान करना है।" इस व्यक्ति-मूलक स्वर में सामाजिक विधान का निषेध है और आधुनिकता की प्रक्रिया की स्वीकृति है। इस तरह के कथन कभी तो कृति का अभिनव अंग हैं और कभी आरापित होने का आभास दत्त है। आरापित कथन इसकी मल्ल पटता का भग भी करते हैं। इन आरापित कथनों का अनव उदाहरण बाज गुप्त तथा कुमारगिरि के दा पिप्या के बाद विवाद में उपलब्ध हैं जिनका उद्देश्य पात्रों के विभिन्न दृष्टिकोणों का निरूपित करना भी है। नारी का

है ? सुख-दुःख क्या है ? इन प्रश्नों पर वाद विवाद कृति में दरारें डाल देता है। इसने नाट्यात्मक सतुल्यता का टेम पहुँचाया है। उपन्यास के अंत में चित्रलेखा और बीजगुप्त का भियारी बनकर जीवन से पलायन करना रामाटिक बाघ का परिणाम है 'यक्तिमूलक' जीवन दृष्टि की देन है आधुनिकता की अस्वीकृति है। इस तरह उपन्यास का अर्थ आधुनिकता की स्वीकृति और इसकी इति आधुनिकता की अस्वीकृति में होती है।

७ इलाचन्द्र त्रिपाठी की उपन्यास-कला जिसे मनावैज्ञानिक की सना दी जाती है, आधुनिकता की वैचारिक स्तर पर आत्मसात किये हुए है। इसका परिणाम यह निकला है कि इसकी वस्तु तथा इसके गिल्फ में सामाजिक का अभाव है। इसका गली टमकी वस्तु का कहन करण की गति से बकित है। इसलिए जाँगी प्रायः मनावैज्ञानिक उपन्यासकार की अपेक्षा मनाविद्वेषण के कथाकार का आभास मन लगन है। इन्होंने पाश्चात्य मनाविज्ञान के सिद्धान्तों को सफलता की बजाय चिंतन के स्तर पर स्वीकार कर चरित्र चित्रण आदि में इनका उपयोग किया है। इसलिए उनके उपन्यासों में मनाविज्ञान के हर स्कूल के सिद्धान्तों को खोजा तथा आका गया है—फ्रायड, एडलर तथा युंग की भाषाओं का प्रभाव का निरीक्षण किया गया है जिसमें इनकी कृति-पक्ष का मूल्यांकन नहीं हो पाया है। मनोविज्ञान आधुनिकता की तरह आज कृति को अतिरिक्त महत्त्व से भरता है लेकिन इस कृति नहीं बना सकता। इनके चरित्र चित्रण में किस मनाविज्ञान का रितना अंग है विस सिद्धान्त की कितनी मात्रा है—इस कमीषी पर इनके उपन्यासों का परखना इसका मूल्यांकन आरापित मूयों के आधार पर करना है। इसी तरह इसका नायक हीनता की भावना में मंचालित है या काम वासना से परिचालित—यह इनके व्यक्तित्व का समर्थन के लिए महायत्न तो हो सकता है, परन्तु इस भी कृति के मूल्यांकन का आधार बनाना असंगत है। उपन्यास में एक से अधिक अविनियमों का संगम होता है जो इस कहानी की विधा से अगुगता है। कहानी में एक ही अविनियम होता है। उपन्यास की अविनियमों में यदि सामाजिक का अभाव है या इनमें दरार हो गयी है तो इनमें एक सफल कृति या बरल कृति की क्या दना कठिन है। कृति की सफलता इसमें मरिचक फल में आँकी जा सकता है। अधिक-से-अधिक इसका सम्भावना के रूप में हो जाँका जा सकता है। जाँगी की उपन्यास कला का मुख्य मनावैज्ञानिक उपन्यास की एक सम्भावना है। घणा-मया [१९७६-२०] में लख जहाज का पछी [१९४७] तक इनका उपन्यासों में व्यक्ति के आन्तरिक जगत् का चित्रण तथा चित्रण है। प्रेमचंद की

उपन्यास कला में जिस प्रकार पात्रों के बाह्य तथा सामाजिक पक्ष पर अधिक बल दिया गया है उसी प्रकार जागी व उपन्यास-साहित्य में इनके आन्तरिक तथा व्यक्तिगत पक्ष की चीर फाट की गई है। उपन्यासकार की धारणा है कि पूँजीवादी संस्कृति का परिणाम व्यक्ति के अहंभाव को स्फूर्ति करने में हुआ है। इसका दूसरा परिणाम सुधारवादी तथा आदर्शवादी दृष्टिकोण के विनाश में शामिल होता है। इनकी उपन्यास कला का उद्देश्य पूँजीवादी संस्कृति की माया-ताआ का विरोध करना है। इसलिए वह अहंभाव की अस्वस्थता और सुधारवाद की निष्क्रियता पर प्रहार करना चाहते हैं। वह भारत की नारी का इस लिए विरोध करने हैं कि वह संस्कारबद्ध है सामंती दासता की पोषक है, भावुकता की प्रतिमा है। उसका त्याग और विलीनन सामंती संस्कृति को देने है। जागी अपनी नारी को भागी मानने है जो पुष्प के अहं का शिकार नहीं बनगी। इस उद्देश्य को लेकर वह अपने उपन्यासों में उस नारी की रचना करते हैं। इसमें कहीं तक इन्हें सफलता मिली है—यह दूसरा प्रश्न है। इस उद्देश्य का निरूपण सयासी [१९४१] के माध्यम से भी किया गया है। इसमें कथा नायक नन्दकिशोर के अहंभाव का सूक्ष्म विश्लेषण मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के धरातल पर किया गया है। अपने अहंभाव की तुष्टि के लिए वह दो नारियों के जीवन से मिलवाना करता है। शांति तथा जयंती का पूरा अधिकार पाने के लिए वह अपने तथा इनके विनाश का कारण बनता है। उसका प्रेम अहंभाव से संचालित है जो उससे सदेह तथा जलन आदि के मूल में है। शांति पर पूरा अधिकार पाने के बाद इसका प्रेम सन्नेह में बदल जाता है। जब जयंती इसका अहंभाव का शिकार बनती है वह भी इससे घातक अहंभाव से बौखलाकर आत्महत्या करने के लिए विवश हो जाता है। इस भयंकर घटना से नन्दकिशोर इतना विक्षिप्त विधुब्ध तथा अस्तव्यस्त हो जाता है कि अन्त में वह सयासी धारण करता है। यह भी वस्तुस्थिति से पलायन है। वह नेता गिरी के चक्कर में जेल भी जाता है। यह रिकत जीवन को भरने का विफल प्रयास है। शांति अपने स्नेह बंधनों का तोड़कर सदा के लिए कहाँ दूसरा आश्रय साज लेती है। इस तरह जागी इन पात्रों के माध्यम से यह निरूपित करना चाहते हैं कि आज के कुण्ठित, विवृत तथा अस्वस्थ जीवन का मूल कारण अहंभाव है जो नन्दकिशोर तथा जयंती के सतुलन का नष्ट कर देता है। इससे विपरीत शान्ति तथा बन्देव से सतुलन का स्थावर पालेते हैं। इस तरह सयासी तथा अपने अन्य उपन्यासों में जोशी व्यक्ति के दुख का उसने बाहर आने की बजाय उसके भीतर खोजना बहतर समझता है। इस दुख का

निदान भी आज के मनाविज्ञान में खोजा गया है। इसलिए जोशी की उपन्यास-कला के उद्देश्य को यदि चिकित्सात्मक की संज्ञा दी जाए तो अनुचित न होगा। इसका कारण यह है कि उपन्यास में मनोविज्ञान का उपयोग चिकित्सा की दृष्टि से किया गया है और यह उपन्यास की रचना प्रक्रिया में बाधक भी सिद्ध होता है। प्रमचंद का सामाजिक उद्देश्य जिस तरह इनकी सृजन प्रक्रिया में दरारें डाल देता है, रचना की सहिलप्यता को बाधात पहुँचाना है उस तरह जोशी का मनोवैज्ञानिक उद्देश्य उपन्यास में अनावश्यक व्याख्याओं के समावेश से इसकी सहिलप्यता को भंग करता है, अवित्तिया का तोड़ डालता है। अपने उद्देश्य का पूरा करने के लिए वह घटनाओं को अस्वाभाविक मोड़ भी देते हैं, रामाचक भी बना डालते हैं। जयन्तों की आत्महत्या, नन्दकिशोर का जेल जाना तथा सत्याम घातक करना गान्धि का छात्र आदि रचना के अभिन्न अंग न हानर आरोपित जान पड़ते हैं। इस तरह के आरोपित या नक्ली अवयव इनके अन्य उपन्यासों में भी उपलब्ध हैं। इसका मूल कारण यह है कि आधुनिकता और मनाविज्ञान की चुनौती को जोशी ने सद्भावितक अथवा वैचारिक स्तर पर स्वीकारा है, मनेदना के घरातल पर सहज रूप से आत्ममान नहीं लिया है। सामाजिक रूप भी सहज हो सकता है। यदि मनाविज्ञान इनकी सृजन-प्रक्रिया का अभिन्न अंग होता तो इनकी स्वीकृति मनेदना के रूप में होती और उपन्यास में इसकी गंभीर मनाविज्ञान को बहन करने की क्षमता में युक्त होती। इन्होंने प्रमचंद के विकरणात्मक गिराव विधान का उपयोग मनोवैज्ञानिक उद्देश्य को गिमान के लिए लिया है। इससे वस्तु तथा गिराव में आन्तरिक संगति का अभाव स्वाभाविक है। इस दृष्टि में जोशी की उपन्यास-कला को आधुनिक रूप में ही मनावैज्ञानिक कहा जा सकता है। इसका कारण वस्तु तथा शिल्प में पारस्परिक विरोध है जो 'जहाज का पछी' में आकर कम होने का आभास देता है। इस उपन्यास तथा इनके अन्य उपन्यासों में आधुनिकता की प्रक्रिया व्यक्तिगत की दृष्टि से संचालित है जिसके आधार पर वह जीवन तथा जगत् का मूल्यांकन करते हैं। इस प्रक्रिया के मूल में मनोवैज्ञानिक दृष्टि है जो मनाविज्ञान के सिद्धान्तों के घरातल पर व्यक्ति के नास्त्यरूप का अंकित तथा चित्रित करती है और परम्परागत मान्यताओं का निराप करता है। इन सिद्धान्तों के कारण और पूँजीवादी मण्डलि के पश्चात्त्य व्यक्ति तथा मण्डलि में त्रिम मनुष्य का रूप हो गया है और त्रिम मनुष्य का अधिष्ठ अर्थ का न्या है उस पहचानन का प्रयास जोशी के उपन्यास में उपलब्ध है। यह इस गम के चित्रण मात्र में मनुष्य न होकर मनुष्य निगम

को देना भी आवश्यक समझते हैं। इस निम्न व मूल्य गान्ति, बलदेव आदि पात्रों के माध्यम से दिये गए हैं। इस तरह आधुनिकता की प्रक्रिया, जिसका सूत्र पात गोदान' में माह भय की अभिव्यक्ति में होता है 'संयामा' में आकर व्यक्ति के वास्तविक या मनोवैज्ञानिक स्वरूप को उद्घाटित करने में व्यस्त है। यह अनुभव होने लगा है कि मनुष्य वास्तव में इतना देवता नहीं जितना पशु है और प्रायः पशुता ही उसके जीवन का संचालित करने वाली नियामक शक्ति है। इस तरह अवतार सम्बंधी मध्यकालीन धारणाएँ ध्वस्त होने लगती हैं और आधुनिकता की वह प्रक्रिया गतिशील है जिसके मूल में वैज्ञानिक जीवन दृष्टि है जो पुरानी मान्यताओं पर प्रश्नचिह्न लगाने के लिए बाधित करती है। इस प्रश्नचिह्न की निरंतरता में आधुनिकता का प्रक्रिया का आकांक्षित जा सकता है। हर दृष्टि में इस दृष्टि के माध्यम से ही पहचाना तथा परखा जा सकता है। इस लिए 'संयामा' में आधुनिकता की प्रक्रिया मनोवैज्ञानिक स्तर पर क्रियाशील है जबकि 'चित्रलेखा' में यह नतिकता के घरातल पर व्यक्त है। जोशी के उपन्यास का मूल्यांकन करने के लिए इस धारणा का दाहराना आवश्यक है कि आधुनिकता से ही दृष्टि की रचना नहीं हो सकती यह इनके उपन्यास को सम सामयिक तथा अतिरिक्त महत्त्व ही दे सकती है। इसका कारण यह है कि जोशी ने इस वैचारिक स्तर पर ही स्वीकार किया है। आधुनिकता प्रायः इनकी संवेदना तथा सृजन प्रक्रिया का अभिन्न अंग नहीं बन सकी है और जिन स्थलों पर तथा जिन चरित्रों में यह इनकी सृजन प्रक्रिया में व्याप्त है वहाँ इनके उपन्यास का दृष्टि पक्ष उभरता है। इसमें जाशी की उपन्यास-कला की उपलब्धि तथा सीमा को आकांक्षित जा सकता है। जहाँ इनका मनोविज्ञान इनके सृजन पर हावी है वहाँ इसकी सीमा का आभास देता है और जहाँ यह रचना प्रक्रिया में व्याप्त है वहाँ यह इसकी उपलब्धि का सूचक है।

८ आधुनिकता की जिस प्रक्रिया का सूत्रपात गोदान [१९३४-३६] में हुआ था वह जनय के तैलर एक जीवना [१९४१-४४] के दा माता में एक नया रूप धारण करती है और हिंदी उपन्यास इस दृष्टि में एक नया मोड़ होता है। इस अन्तराल में यह प्रक्रिया मुनाता त्यागपत्र तथा चित्रलेखा आदि में विकसित तथा अभिव्यक्त सम्पन्न तथा विपन्न भी होती रहा है। इस दाहरी स्थिति का कारण यह है कि यह प्रक्रिया कभी गतिशील तथा कभी स्थितिशील होने का आभास होता रही है कभी मध्यकालीन मान्यताओं का विरोध करती रही है तो कभी इनसे मामजस्य भी स्थापित करती रही है। यह



स्थिति छायावादी कविता में भी उपलब्ध है।<sup>१</sup> इसलिए इसे यदि युग वीर का परिणाम कहा जाए तो अनुचित न होगा। अनेक के श्रेष्ठ में मध्यकालीन वाद्य से सामाजिक म्यापिन करने का प्रयास नहीं है। इस दृष्टि से 'गादान' के बाद यह उपन्यास एक नया माद का सूचक है। इस उपन्यास में आधुनिकता की चुनौती को गहर रूप में स्वीकारा गया है। इसे सम्प्रेषित करने के लिए शिल्पगत प्रयास भी करने पड़े हैं। इसलिए 'शेखर' के निजी स्वर है जो सम तथा विषम हान का आभास देते हैं। इसके स्तरों का घोर विराघ भी हुआ है। यह शायद इसलिए कि इसमें व्यक्त आधुनिकता पाठक की चेतना के अनुरूप नहीं थी। इसके कथा-नायक शेखर पर अनेक आरोप भी लगाए हैं—जैसे गहर घोर अहवादी तथा अराजकतावादी है, इसमें सामाजिक दायित्व तथा नतिकता का अभाव है यह आत्मरत तथा आत्मकेन्द्रित है यह नास्तिक तथा नियतिवादी है इसका विद्रोह नपुंसक तथा निष्क्रिय है इसको क्रान्ति लक्ष्यहीन तथा दिशाहीन है इसका अदम्य अहंकार नारी पर अधिकार पाने में लीन है, सगी बहन सरस्वती तथा मौसरी बहन गंगी भी इसके लिए सरस बन जाती है। इस तरह गहर का व्यक्तित्व आरोपों तथा लाछना से घिरा हुआ है। इस तरह की कड़ी आलाचना से यह सिद्ध हो जाता है कि इसका व्यक्तित्व असाधारण है और अन्य कथा-नायकों से नितान्त भिन्न है। शेखर के जीवन की मूल सवेदना तथा भावना क्या है? इस सम्बन्ध में भारी मतभेद पाया जाता है। इसका कारण यह हो सकता है कि हर आलोचक ने इसे निजी दृष्टि से देखा है और आरोपित मूल्यांकन आधार पर परखा है। उपन्यासकार का भी शेखर के बारे में अपना मत है जिसने इसकी सृष्टि की है। इनका मूल रूप में कथन है कि शेखर का जीवन दान 'स्वातन्त्र्य की खाज' है।<sup>२</sup> यह स्वातन्त्र्य की खाज' क्या है—इस प्रश्न का उत्तर अनेक के श्रेष्ठ में ही खोजा जा सकता है। यदि भारतीय नीति शास्त्र की दृष्टि में इसके चरित्र में स्थलन हुआ है तो इस अनतिक्रम कहा जा सकता है। अनेक स्थितिगत नतिकता का विराघ करते हैं और इस तरह वह आधुनिकता की चुनौती को स्वीकार करते हैं। वह अपने मन का इन क्षणों में स्पष्ट भी करते हैं—'गहर की स्वातन्त्र्य की खाज दूटती हुई नैतिक रुद्धिवादी चीज नानि के मूल खोज की खोज है।<sup>३</sup> अनेक जब व्यक्तित्व की खाज की बात करते हैं स्वातन्त्र्य की खाज पर बल देते हैं, मूल खोज की खाज को निरूपित करते

१ 'निर्गम और निर्वच', आधुनिक कविता।

२ 'समयनेपद', पृ० ६७।

३ वही, पृ० ६७।

है तब वह डी० एच० लारेंस की विचारधारा से प्रभावित जान पड़ते हैं। वह मानव की नैसर्गिक मनावृत्तियाँ के आधार पर नैतिक मायताओं का स्वीकृति देते हैं नैतिक धारणाओं के दबाव में नैसर्गिक मनावृत्तियाँ का कुण्ठित होने से बचाते हैं। यह बौद्धिकता के प्रति अवैदिकता का विद्रोह है जिसके मूल में पाश्चात्य मनाविश्लेषण के सिद्धान्त हैं। इस विद्रोह का विस्फोट पाश्चात्य देशों में हुआ था और इस विस्फोट का परिणाम मनावैज्ञानिक उपन्यास का विकास में लक्षित होता है। अचेतन उपचेतन सचेतन मन से सम्बद्ध विचारधारा ने मनुष्य के नये स्वरूप का उद्घाटित किया। नैसर्गिक व्यक्तित्व का विद्वलण भी इस चिन्तनधारा की देन है। उसने जीवन को संचालित करने वाली शक्ति को उसकी सहज बुद्धि में आँका गया है—'वह बुद्धि उसकी थी, उसका उपयोग के लिए थी वह उसका मनचाहा उपयोग करता था। और वह जानता था जहाँ उसने अपनी सहज बुद्धि की प्रेरणा मानी वहाँ उसने उचित किया और जहाँ उसकी बुद्धि का दूसरो ने प्रेरित किया वही वह लड़खड़ाया।' यदि इस वक्तव्य का शेरर का व्यक्तित्व का एक सूत्र था मन्त्र स्वीकार कर लिया जाए तो उसके व्यक्तित्व का अधिकांश स्पष्ट हो जाता है। इसमें बौद्धिकता के प्रति अवैदिकता का विद्रोह लक्षित होता है। इस तरह आधुनिकता की प्रक्रिया जिसके मूल में वैज्ञानिक दृष्टि है उपन्यास में क्रियाशील है। शेरर की सहज बुद्धि या सहज विकास में भय और काम बाधक हैं जो उसके अह को आघात पहुँचाते हैं। अपने अह में वह जकेला है मूल रचना है किसी की अनुकृति नहीं है।<sup>१</sup> इसे अनक उदाहरणों से स्पष्ट किया जा सकता है—अजायबघर से नकली बाघ से भय त्वाकर भागना इनमें एक है। वह भय और काम में बाधक शक्तियों पर विजय पान के लिए स्वभाव तथा सहज भाव से विद्रोही है। इस लिए वह जन्मजात विद्रोही है। उसका अह इतना स्फीत है कि वह किसी को पूजा नहीं कर सकता अपनी पूजा करवाना जानता है। उसकी काम भावना का विकास तीनों सापाना से गुजरकर होता है—आत्मरति समालिगी रति और विपरीतलिगी रति। आत्मरति अपनी पूजा करवाने में समालिगी रति अपने सहपाठी मित्र कुमार के माध्यम से और विपरीतलिगी रति में अनक उदाहरण उन नारियाँ में मिल जाते हैं जो शेरर के निकट आती हैं। यह सहज बुद्धि तथा सहज विकास सम्बन्धी प्रत्यक्ष दृष्टि की देन है। यदि इसे स्वीकार कर लिया जाए तो सगी वहन सरस्वती का सरस हाना मा का मधुर हाना भीमरी

१ शेरर एक जीवनी १, पृ० ६३

२ वही पृ० ५६।

बहन गति से रति आदि पर आराप लगाना अमंगल हो जाता है। यह सामाजिक भय के निराकरण का परिणाम है। उसकी घणा भी उसकी सहज बुद्धि की उपज है। वह विदेशी कपड़ा तथा विदेशी भाषा से घणा करने लगता है, मनोरंजन के लिए पिजरे में बंद पछिया को उड़ा देता है। शेखर में सामाजिक दायित्व का नितान्त अभाव भी नहीं है। वह उस बाल विधवा की पूजा तक करने लगता है जिसकी लड़की फूला से उसे खेलने की मनाही की जाती है, वह मलाबार की यात्रा इसलिए करता है ताकि अछूतों के गोपण का अनुभव कर सके, एक मरणासन्न नारी को पीठ पर लादकर वह अस्पताल भी पहुँचाता है निरक्षर बालकों को पढ़ाने के लिए वह रात्रि पाठशाला भी खोलता है। इनका संकेत करना इसलिए आवश्यक है कि शेखर का नितान्त आत्मरत आत्मकेन्द्रित आदि कहकर इस पर सामाजिक दायित्वहीनता का आराप लगाया गया है जो अनुचित है। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि उपन्यास में उसकी व्यक्तिकता का आधार वैज्ञानिक है और सामाजिकता का आवेगात्मक। शेखर की सामाजिकता के मूल में दृष्टि वैज्ञानिक नहीं है, वह आवेगमूलक है। यह दृष्टि गेयर की है या अज्ञेय की—यह प्रश्न दूसरा है। यदि उपन्यासकार कृति से तटस्थ है तो यह दृष्टि शेखर की है और यदि वह गेयर में आसक्त है तो यह अज्ञेय की है। अगम्य तत्त्व नहीं जान पड़ते वह गेयर में अनुरक्त हैं।

गेयर एक जीवनी का दूसरा भाग स्वतंत्र होने का आभास देकर भी पहले का ही विकास तथा विस्तार है। इसके केन्द्र में गति है। इस माध्यम में नैतिक तथा सामाजिक समस्याओं को उठाया गया है। गति रमण की पत्नी और गेयर की प्रेयसी है। एक-दूसरे का बहन भाई बहन न भी सम्बन्ध में अधिक जटिलता आ जाती है। गेयर गिनु यात्रा तथा विचार जीवन की अनुभूतियों से सम्पन्न होकर जीवन में गति का पूरी तरह पाना चाहता है लेकिन उस पाना चुम्बना तक ही सीमित रह जाता है। गेयर का मन में पाप भाव का साया का गति दूर कर देती है। स्नेह में पाप का प्रदन हो नहीं उठता। यह भी उस सहज जीवन का निरूपण का परिणाम है जो 'सहज बुद्धि का दान है। इस तरह गेयर का समाज में भय, जो नराला बाप से भय का रूपान्तर है गति के कम वाक्य में दूर हो जाता है—'गेयर मैंने तुम्हें गंगा प्यार किया है। पाप मैंने कभी नहीं किया।' क्या वाच का गहजना का निरूपित करना उपन्यास का उद्देश्य नहीं है? क्या हममें लार्जेन्ग के चिन्तन का पुट नहीं है? क्या इस चिन्तन माध्यम से केवल भ्रष्टाचार मायताओं का

विराध नहीं कर रहे है ? क्या इस विरोध में आधुनिकता की चुनौती को स्वीकारा नहीं गया है ? क्या गति से शेखर का पलायन इस चुनौती को अस्वीकृति नहीं है ? जहाँ तक शेखर व चित्तन का सम्बन्ध है उस पर बाबा मदन सिंह के विचारों की गहरी छाप है। शेखर की जिज्ञासा अदम्य है वह जन्म जात है। इसलिए प्रश्न की निरंतरता बनी रहती है और इसमें आधुनिकता का आवाज सन्नत है। इस सम्बन्ध में हिंसा अहिंसा सम्बन्धी वाद विवाद है जो उस युग की चेतना का अभिन्न अंग है। इस वाद विवाद में उप्यास की सूत्र शक्तों और काव्यात्मक गद्य को सुलभ रूप से खेलेने का अवसर मिला है— पीड़ा तपस्या है किन्तु असली तपस्या तो जिज्ञासा है—क्याकि वही सत्य बड़ी है, प्रश्नों का अन्त कहाँ—जिज्ञासा के घूट नहीं हाते, वह तो भीम प्रवाहिनी कूल हीना नदी है स्वयं जीवन की तरह दुर्निवार ।” इन सूत्रों से अनेक की तत्सम गली का भी परिचय मिल जाता है। इस तरह के बाबा क भी अनेक कथन है—‘अभिमान से बड़ा दद होता है पर दद से बड़ा एक विश्वास।’ १ ‘शेखर ने बाबा से बहुत कुछ सीखा है, विनय भाव भी सीखा है। अनेक के अनुसार ‘वेदना एक शक्ति है जो दृष्टि देता है। जा यातना में है वह द्रष्टा हो सकता है।’ २ शेखर का अह धीरे धीरे मजबूत लगता है और भोजन अधिक चमकने भी लगता है। इसे मंजिन में मोहमिन और रामजी का भी हाथ है। वह बाबा व पाँव छूने में तो अपना अपमान समझता है परन्तु उसका चला बसने का समाचार को पाकर राता भी है। सरस्वती गारदा गति, गति से सम्बन्ध में शेखर के अहंकार का गद्य अधिक है काम-वासना की कम। गारदा की जाँचें मूढ़कर उनका रुखे वंशा का सूघकर वह उसे छोड़ देता है। वह तपेदिक की मरीज गति के कण्ठ का उगलिया से छूकर चला जाता है। शेखर में नदी का झोप के भुवन का साहस अभी नहीं आया है जो रखा से उसका सम्बन्ध में लक्षित होता है। इस तरह शेखर की सन्तुष्टि नारी के स्पर्श मात्र से हो जाती है। उस नारी के छूने से गया स्नान की अनुभूति तो नहीं मिलती लेकिन तपन को गति करने के लिए गीतल जल के पान की अवश्य मिल जाता है। उसकी संगी बहन सरस्वती उसका मन में सरस्वती से बहन और बहन से सरस हो जाती है। गति पति से परित्यक्त होने के बाद शेखर व पास रहने लगती है, परन्तु इनमें गारीरक मिलन नहीं हो पाता। इनमें मस्कारों की गाठ बाधक बनती है। शेखर का मन सदेहो-संगया से घिरा हुआ है। उसकी शिखर

१ ‘शेखर पर जीवनी २’ पृ० १००।

२ ‘शेखर की भूमिका।’